Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 7, September-2018, ISSN 2230-7540

वैष्वीकरण और मीडिया

Dr. Kamal*

Assistant Professor, Chotu Ram Arya College, Sonipat

सार – *आज हम जिस दुनिया में रह रहे हैं उसमें सब-कुछ अपना-सा होकर भी अपना नहीं है। भूमण्डलीकरण अर्थात् बाजारवाद ने पूरी दुनिया को इतने करीब ला दिया है कि हम सिमटकर एक छोटे से गाँव में तबदील हो गये हैं, लेकिन क्या हम वास्तव में करीब आये हैं या एक साजिश के तहत करीब लाये गये हैं? इसका फैसला न तो कहानीकार उदय प्रकाश ने अपने प्रस्तुत कहानी-संग्रह में किया है और न ही ऐसा कुछ करना लेखक का दृष्टिकोण मालूम होता है। लेखक ने तो अपने पात्रों के माध्यम से भूमण्डलीकरण और इससे उत्पन्न स्थितियों की गहन जाँच-पड़ताल कर पाठक को ही फैसला लेने या करने पर मजबूर किया है कि भूमण्डलीकरण किसके लिये है? और इससे लाभान्वित कौन हो रहा है? वैसे भी भूमण्डलीकरण का इतना और इससे भी ज्यादा इसकी विशालता के पीछे मीडिया एवं इंटरनेट ही काम कर रहा है। मीडिया और इंटरनेट ही बाजार को घर-घर पहुँचाने का काम कर रहे हैं। विज्ञापन के कारण उत्पादक की बिक्री में वृद्धि होती है, साथ-ही-साथ एक इसने सामान्य स्त्री को भी मीडिया रातोंरात असामान्य बना दिया। 'पालगोमरा का स्कूटर' नामक कहानी में कहानीकार ने एक सफाई कर्मचारी की सत्रह साल की बेटी को प्रस्तुत किया है। जिसमें वह एक विज्ञापन में आठ फुट बाय चार फुट साईज के विशाल ब्लेड के मोडल पर वस्त्रहीन सोई थी जिसके प्रभावस्वरूप वह रातोंरात मालोमाल हो चुकी थी। तो दूसरी तरफ एक साधारण लड़की आशा मिश्रा भी 'ब्लेक होर्स' नामक बिअर के विज्ञापन के कारण मालोमाल हो जाती है।*

----------X----------

वर्तमान दशक की हिन्दी कहानियाँ ग्लोबलाइजेशन, इलेक्ट्रोनिक सूचना प्रणाली के कारण आए विकास के सामने प्रश्न चिह्न खड़ा करती हैं। तो युवाओं की आकांक्षाओं, सम्भावनाओं को नई ऊँचाईयाँ भी प्रदान कर रही हैं। मीडिया और इंटरनेट से सब-कुछ बदला-बदला नया-सा लगता है। ''कम्प्यूटर में ही तो पूरी दुनिया है। कम्प्यूटर में चाहों तो अपना मोहल्ला ढूँढ लो, अपना घर ढूँढ लो, मेलबर्न में बैठे अपने दोस्त के बेडरूम में संध लगा लो, नौकरी की तलाश कर लो, शादी के लिए लड़का या लड़की तलाश लो या फिर दुनिया की सबसे हॉट लड़की का फोटो निकालकर उसे बिल्कुल करीब से निहार लो। आप चाहो तो ढूँढ लो बम बनाने की विधियाँ।''

इंटरनेट की मदद से हम जब चाहें वहाँ पहुँच सकते हैं। और सब्जी बनाने से लेकर बम बनाने तक का कार्य हम इंटरनेट के जरिये कर सकते हैं। शॉपिंग से लेकर सैकस तक मिनटों में इसके जरिये कर सकते हैं। उमाशंकर चैधरी ने अपनी कहानी 'ईर नीर अते फते' में इंटरनेट की व्यापकता को आरेखित करते हुए लिखा है कि इस पर वे दिमाग-पच्ची करें कि बम बनता कैसे है? वे कम्प्यूटर और इंटरनेट के अभ्यस्त थे और वे जानते थे कि प्याज की चटनी कैसे बनती है, इसकी प्रविधि भी इस नेट पर उपलब्ध है। बम बनाना तो बड़ी बात है और बड़ी बातों का समाधान तो बहुत ही आसान है। इंटरनेट की महत्ता को रेखांकित करने के लिए जो लतीफा इनके यहाँ मशहूर है वे अक्सर ऐसे समय में उसका इस्तेमाल करते हैं। लतीफे में एक नवविवाहित दम्पत्ति है और सुहागरात का सिचुएशन। दोनों अनाड़ी थे और मामला काफी गंभीर हो गया। उपाय कुछ निकल रहा नहीं था और चिल्लाना या बाहर निकलना सम्भव नहीं था। यह तो उसकी किस्मत अच्छी थी कि लड़के का लैपटॉप कमरे के भीतर था और वह भी इंटरनेट के साथ। लड़के ने उसी अवस्था में लैपटॉप का सहारा लिया। गूगल पर सर्च मारा, तमाम साइट्स खोले और फिर स्वस्थ बच पाये।'' लेकिन कुछ शातिर पढ़े-लिखे युवा इसका गलत यूज भी करते हैं। बम-बलास्ट, फिरौती, रिश्वत की डील, सुरक्षा सम्बन्धी दस्तावेजों को लीक करना आदि कार्य इंटरनेट से बड़े ही सुनियोजित ढंग से होने लगे हैं। 'सुनो' नामक कहानी में युवा I.A.S. अधिकारी इंटरनेट की मदद से बहुत बड़ा अपराध करता है।

वैसे भी आज का एक वर्ग मीडिया और इंटरनेट से इतना प्रभावित हो चुका कि मोबाइल और नेट के बिना वह अधूरा जान पड़ता है। "कम्प्यूटर, लैपटॉप, मोबाइल, मोबाइल में कैमरा, विडियोग्राफी, म्यूजिक, एफ.एम. इनकी जिन्दगी है।" इस तरह 'ईर नीर अते फते' नामक कहानी में लेखक ने मीडिया और इंटरनेट की नकारात्मकता को दृष्टि देते हुए

www.ignited.in

बताया है कि किस प्रकार मीडिया अपने प्रभाव से बम व बम बलास्ट करने वाले आतंकवादी का स्कैच भी जारी कर देता है। लेखक ने लिखा है कि "महानगर की पुलिस को इस बम-ब्लास्ट के सम्बन्ध में एक अभूतपूर्व उपलब्धि हाथ लगी थी। इससे सम्बन्धित पाँच आतंकवादियों को मुस्लिम बहुल एरिया में मार गिराया गया था। पाँचों के नाम के साथ उनकी तस्वीर भी दी गयी थी। उनके चेहरे पर गोलियों के निशान थे और उनका चेहरा काफी विकृत हो चुका था। उनके शरीर पर लगी सारी गोलियों के निशान उनके शरीर के सामने वाले भाग में थे। पाँचों मुसलमान थे और उनकी उम्र लगभग पच्चीस से सत्ताईस के करीब थी। पाँचों यहाँ किसी बड़े विश्वविद्यालय से कम्प्यूटर का कोई गम्भीर कोर्स कर रहे थे। पाँचों का सम्बन्ध दूर किसी अज्ञात देश से भी था। उस देश से जहाँ एक भी मनुष्य नहंी रहता था। वहाँ सिर्फ नरभक्षी रहते थे। यह यहाँ की मुस्तैद पुलिस की बड़ी उपलब्धि मानी गयी थी और इस तरह से इस बम ब्लास्ट के रहस्य को मात्र चार-पाँच दिनों में ही सुलझा लिया गया था।

अर्थात् यहाँ मीडिया ने आतंकवाद का कारण मुस्लिमों को बनाते हुए, वास्तविकता को छुपा दिया। जबकि आतंकी कोई और था जबकि मीडिया ने जो स्कैच जारी किया जिसमें मुस्लिम व्यक्तियों की तस्वीर बनाई और उसे ही सार्वजनिक कर दिया और इस तरह मीडिया ने एक तरह से साम्प्रदायिकता को बढ़ावा ही दिया है। दूसरी तरफ उदय प्रकाश अपने पात्र पाल से मीडिया की संरचना को आरेखित करवाते हुए कहलवाते हैं- "पाँच साल पहले एक गाँव में सोते हुए सड़सठ लोगों को गोलियों से भून डालने वाले डाकू की जीवनी पर बनी फिल्म सुपर हिट हो गई थी और उसे ऑस्कर अवार्ड मिलने वाला था। महात्मा गाँधी को अश्लील गालियाँ देकर राष्ट्र का एक सम्मानित समलैंगिक मीडिया स्टार बन चुका था।"

अगर बात कम्प्यूटर और नेट की की जाए तो आज के युवाओं का यह सबसे बड़ा मनोरंजन और सबसे बड़ी दुनिया है। और बहुत बड़ा युवा वर्ग इसके मोह में इस कद्र फंस चुका है कि इससे उत्पन्न खतरों को भी खुशी-खुशी गले लगाता चला आ रहा है। आज युवाओं के लिए यह प्रगति का सबसे बड़ा औजार बन चुका है तो दूसरी तरफ वर्तमान युग के तनाव, कुंठा एवं अकेलेपन दूर करने का हमसफर भी बना है। तो दूसरी तरफ बड़े-बड़े प्रोजेक्टों को घण्टों में समेट दिया जाता है लेकिन इसमें भी कुछ ज्ञानी लोग मनचाहा बदलाव कर देते है। पिछले महीने की रिपोर्ट निकाली, एक्सेल पर अंकों को एक्स्ट्रापोलेट किया। जहाँ मर्जी हुई वहाँ टिक टैक टो खेलते हुई कहीं पांच कहीं दस प्रतिशत का इजाफा किया। पिछले महीने की रिपोर्ट निकाली, एक्सेल पर अंकों को एक्स्ट्रापोलेट किया। जहाँ मर्जी हुई वहाँ टिक टैक टो खेलते हुई कहीं पाँच कहीं दस प्रतिशत का इजाफा किया। शीट पर रंगों की बौछार की, कहीं हाईलाइट किया, कहीं रंग बदला, कहीं फांट बड़ा किया, कहीं इटैलिक्स की, कहीं बोल्ड। ये खेल खेलने का समय था। डेडलाइन अभी डेथलाइन होने में दस मिनट का समय और था। पाँच मिनट पहले खिरके को रिपोर्ट मेल की। फिर अहसान जताते हुए एक हार्ड कॉपी भी उसकी मेज पर पटक आयी। पाँच मिनट पहले सिरके को रिपोर्ट मेल की। फिर एहसान जताते हुए एक हार्ड कॉपी भी उसकी मेज पर पटक गयी।

तो इस तरह मीडिया अर्थात् सूचना क्रान्ति ने सालों के कामों को मिनटों में निपटा दिया और युवा वर्ग की आकांक्षाओं को भी पल-भर में पूरी करने में सूचना ने अहम भूमिका निभाई है। लेकिन इसका नकारात्मक पक्ष भी कम भयावह नहीं है। उदय प्रकाश ने इस तथ्य को निम्न पंक्तियों द्वारा अभिव्यक्त किया है -"मुजफ्फरनगर के गेहूँ के खेतों में 2 अक्तूबर, 1994 को जिन पचीसों उत्तराखंडी महिलाओं को भारतवर्ष की पुलिस ने खदेड़-खदेड़कर रेप किया, वह सिर्फ एक सूचना है। फिलीपीन के शहर मनीला में दिल्ली के वसंतकुंज इलाके में रहने वाली लड़की सुस्मिता सेन के मिस युनिवर्स चुने जाने की सूचना के मुकाबले एक निहायत फटीचर सूचना, क्योंकि भारत अब भूमंडलीकरण के कारण अंतर्राष्ट्रीय अर्थतंत्र का एक उभरता हुआ खुला मालगोदाम और विशाल उपभोक्ता बाजार बन गया है। मुजफ्फरनगर की सूचना से इस मालगोदाम की जो औरत अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भिंडी, ककड़ी, आलू या मूली साबित हो रही थी, मनीला की सूचना ने उसे सोना, अफीम या यूरेनियम जैसी कीमती और महँगा बना दिया है और 2 अक्तूबर की तारीख अब कोई भी प्रतीक बनने की पुरानी क्षमता खो चुकी है क्योंकि ईश्वर अब मर चुकी है।" और अगर आज भी कोई आतंकवादी घटना कहीं घट जाती है तो हमारा मीडिया देश-विदेशों की खबरों को छोड़कर हफ्तों, महीनों तक इसी के पीछे लगा रहता है। "समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, टेलिविजन, शासन का बहाना सब कुछ आतंकवाद से शुरू होकर आतंकवाद पर ही समाप्त होता है।"

इस तरह युवा लेखक तरूण भटनागर ने अपनी कहानी 'हँसोड़-हँसुली' में भी मीडिया की नकारात्मक भूमिका को पेश करते हुए लिखा है-पर अब मीडिया को कलेक्टर के विरुद्ध 'लडइय्या भगाओ अभियान' के रूप में एक मुद्दा मिल गया था। गेंद अब मीडिया के पाले में थी। सो वह पूरी मट्टीपलीत करने पर उतर आया। रोज कुकुरमुत्ते की तरह उगने वाले

www.ignited.in

टी॰वी॰ न्यूज चैनलों में पट्टियाँ चलने लगीं - "कलेक्टर की लापरवाही से लोरमी के लोग काल के मुँह में सामने को मजबूर" "लोरमी प्रॉब्लम: एडमिनिस्ट्रेशन फेल्ड टू किल द मैन ईटर फॉक्स... स्केयर्ड पीपुल स्टिल आन मर्सी ऑफ़ गॉड।"

"लोरमी समस्या: एक और मौत। लोगों की जान बचाने में प्रशासन नाकामयाब।"

सरकार ने चिल्लपों से कंझाकर 'मीडिया के नकारा कलेक्टर' का ट्रांसफर कर दिया। अर्थात् यह मीडिया सच्चाई जानने की कोशिश न करके कलेक्टर पर ही सारी जिम्मेदारी लाद देता है और उसका तबादला कराकर ही दम लेता है। जबकि वास्तव में कलेक्टर दोषी न होकर मीडिया ही दोषी था, जिसने सच्चाई न जानकर अफवाहों पर भरोसा किया।

मीडिया की तरफ देखें तो लगभग हर रोज किसी अखबार के नये संस्करण या इलाकाई चैनलों का उद्घाटन होने की खबरें पढ़-सुनकर गाँव व छोटे शहरों और कस्बों वाले शाइनिंग इंडिया का भ्रम पालते हैं। लेकिन उनके ढांचे और कार्यशैली को परखें तो यहाँ भी लगभग हर कहीं जुगाडोनामिक्सकाबिज हैं। कम तनख्वाह पर रखे गये अंशकालिक स्टिंगरों अनुवादकों और मोडेम ऑपरेटरों की अर्द्धप्रशिक्षित फौज, अंग्रेजी अखबारों के लोकप्रिय स्तंभों, विदेशी साइटस व संवाद एजेंसियों से रोपी गई खबरों और उनके बीच कुछ खास शिक्षा संस्थानों, नेताओं, सरकारी विभागों, निजी हस्पतालों की गुणवत्ता पर अश-अशभरी खबरें, जो पेड न्यूज का शक पैदा करती हैं। प्रचार के लिए महंगी कंपनियों की सेवाएं ली जाती हैं। क्या ऐसे में इसे हम हमारे लोकतन्त्र का चैथा स्तम्भ कह सकते हैं।

आज के इंटरनेट मीडिया युग की बात करें तो इस युग ने युवाओं की संवेदनाओं को नई ऊँचाईयां दी हैं। इसने नई पीढ़ी भी अपने पुरानेपन के खोल से बाहर झांकने लगी है। साइबर जगत ने जहाँ सुविधाओं में बढोतरी की है, वहीं, कुछ ऐसे अपराधों को बढावा भी दिया है, जिसमें ठगा जाकर व्यक्ति किसी को दोष नहीं दे पाता है, और अपने आप को ही कोसकर रह जाता है। सुषमा मुनीद्र की सघः प्रकाशित कहानी पुस्तक 'ऑन लाइन रोमांस' नए मिजाज की कुछ ऐसी ही कहानी कहती है। 'ऑनलाईन रोमांस' शीर्षक कहानी ई.मेल और चेटिंग के सहारे रोमांस और शादी के विचित्र तिलिस्म का पर्दा फाश करती है, जहाँ दूसरी ओर से लड़की को प्रपोज करने वाला लड़का भी अन्ततः लड़की ही सिद्ध होता है और कहानी की नायिका डेजी ठगी सी रह जाती है- "डेजी विश्वास नहीं कर पा रही थी। इंटरनेट की तिलिस्मी दुनिया में संबंधों की न महता है, न गरिमा।"

इस तरह हम कह सकते हैं कि विवेच्य युग के कहानीकारों ने वैश्वीकरण और मीडिया के नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों चरित्र को बड़ी बारीकी से पकड़कर उनका प्रयोगात्मक वर्णन किया है।

नामक कहानी में जिन चार युवाओं को केन्द्र बनाया है उनकी पहचान भी लेखक ने बताते हुए लिखा है- "आज अपनी चाह में ये हिट हैं, कम्प्यूटर, लैपटॉप, मोबाइल, मोबाइल में कैमरा, विडियोग्राफी, म्यूजिक, एफ.एम. इनकी जिन्दगी है।" अर्थात् विज्ञापनों ने हमारे युवा-वर्ग को समय से पहले परिपक्व बना दिया है।

विज्ञापनों ने युवा वर्ग को एक-साथ दो चीजें प्रदान की हैं- एक तो वे समय से पहले जागरूक बन गये हैं तो दूसरा वे पाश्चात्य संस्कृति के मकड़जाल में फंसाये जा रहे हैं। प्रत्यक्षा की कहानी 'लालपरी/रीडिफमेल डॉटकॉम उर्फ ईमेल शीमेल' की निम्न पंक्तियाँ उपरोक्त दोनों ही बातों को सिद्ध करती है-

"बेटा- मतलब कान फोड़ संगीत,

रेड हॉट चिली पेपर और बैब स्ट्रीट ब्वायज,

बेटा- मतलब बर्गर, पिज्जा, फूट लॉट

बेटा- मतलब पढ़ाई-पढ़ाई और फिर पढ़ाई।

एक बेटी भी है।

बैंगलोर में मेडीकल की पढ़ाई,

हाथ-पैर की वैक्सिंग,

फेशियल और लोरिपाल।

क्लच में फँसे स्ट्रीक्डबाल, कमर पर टैटू, नाभि में नथनी, पैरों में रंगीन धागे, उजलाकोट और स्टेथोस्कोप, सपने-सपने और फिर सपने।"

इस तरह स्पष्ट हो जाता है कि आज के युवा वर्ग पर ब्रांड संस्कृति भले ही हावी हो चुकी हो, लेकिन अब भी कैरियर के प्रति अत्यधिक जागरूक दिखाई दे रहे हैं।

विज्ञापन एवं ब्रांड संस्कृति ने हमारे राष्ट्र का स्वरूप ही बदल दिया है। ईमान और परोपकार का स्थान भौतिकवादी उपलब्धियों ने ले लिया है। छोटे-बड़े फायदे के लिए विज्ञापन ने सौदेबाजी को पर लगा दिये हैं। आज हमारा जीवन विज्ञापन एवं ब्रांड संस्कृति की गिरफ्त में है। आज हम बाजार

घूमते नहीं, बाजार हमें घुमाता है। हमारी हर तरक्की में बाजार की भूमिका महत्वपूर्ण बनती जा रही है और इसे महत्वपूर्ण बनाने में विज्ञापनों ने बहुत बड़ी भूमिका अदा की है। विज्ञापनों के इस दौर में अब केवल खरीददार बसते हैं और जो खरीददार नहीं है, वे इंसान भी नहीं है। आज कुछ ऐसी ही संस्कृति विकसित कर दी है विज्ञापनों ने। "जैसे करोड़पतियों की संख्या में वृद्धि एक हाई-प्रोफाइल घटना है, इसलिए प्रमुखता से छपती है और बार-बार छपती है, मगर कुपोषण से भारत के आधे बच्चों का पीड़ित होना एक लो-प्रोफाइल घटना है, इसलिए एक दिन छपकर रह जाती है।"

क्योंकि आज का विज्ञापन जगत वही परोसता है जो बाजार को बढ़ावा दे। (चूंकि इसका भी मूल कारण वैश्वीकरण के कारण उत्पन्न हुआ अत्यधिक उत्पादन नहीं है) क्योंकि वैश्वीकरण के अन्तर्गत निजीकरण की आर्थिक नीतियाँ अपनाई गई है। निजीकरण के अन्तर्गत सरकार बहुत से बीमार उद्योगों को निजी हाथों में सौंपने के लिए समय-समय पर नीलामी करती रही है। सार्वजनिक धन-सम्पदा को इस प्रकार निजी हाथों में सौंपने की हमारी बौद्धिक वर्ग में हमेशा से आलोचना होती रही है। इन कंपनियों के द्वारा विज्ञापनों के जरिये उपभोक्ता को मनोवैज्ञानिक रूप से प्रभावित किया जाता है। जिस शान्ति और चैन को आज का मध्ययुवावर्ग जिस बैचेनी से खोज रहा है, उसे उपभोक्ता सामग्री से जोड़कर बेचा जाता है। यह एक बहुत बड़ी विसंगति ही है कि जो उपभोक्ता सामग्री (उधार या किस्तों पर खरीदकर) व्यक्ति को अशान्त करती हैं, उसे ही शान्ति से जोड़कर, चमत्कारी बताया जाता है। ऐस में हमारे आलोच्य काल के लेखक विज्ञापनों की वास्तविकता से अनभिज्ञ नहीं है। वे मानते है कि यह एक ऐसा माया जाल है जो युवा वर्ग को बाँध तो सकता है परन्तु मुक्ति नहीं दे सकता। इस विज्ञापन छलावे को प्रस्तुत करते हुए लेखक संजय खाती अपनी कहानी 'बाहर कुछ नहीं था' में लिखते हैं- "यहाँ टाईम और स्पेस के आरपार ट्रेडीशन और मॉडर्निटी, ओल्ड एण्ड न्यू, पास्ट एण्ड फ्यूचर और सिविलाइजेशन का पूरा विकास एक चीज में सिमट जाता है और वह है हमारी कंपनी की विजन। लुकदिस जिधर इशारा किया गया था, मैंने एक आदमकद मूर्ति देखी... उसके हाथ में वही टूथपेस्ट था और वह मुस्करा रही थी।"

संदर्भ सूची

1. उमाशंकर चैधरी, अयोध्या बाबू सनक गये है, पृ॰ 131
2. उमाशंकर चैधरी, अयोध्या बाबू सनक गये है पृ॰ 142
3. वही, पृ॰ 136-137
4. उदय प्रकाश, पाल गोमरा का स्कूटर, पृ॰ 39
5. प्रत्यक्षा, जंगल का जादू तिल-तिल, पृ॰ 72
6. उदय प्रकाश, पाल गोमरा का स्कूटर, पृ॰ 64
7. चन्दन पाझडेय, भूलना, पृ॰ 50
8. तरूण भटनागर, गुल मेंहदी की झाडिण, पृ॰ 143
9. राकेश मिश्रा, बाकी धुआँ रहने दिया, पृ॰ 64
10. सुषमा मुनीन्द्र, ऑन लाईन रोमांस, पृ॰ 256
11. उमाशंकर चैधरी- अयोध्या बाबू सनक गये हैं पृ॰ 137
12. प्रत्यक्षा, जंगल का जादू तिल-तिल पृ॰ 75-76
13. विष्णु नागर, भारत एक बाजार, पृ॰ 72
14. संजय खाती, बाहर कुछ नहीं था, पृ॰ 115

Corresponding Author

Dr. Kamal*

Assistant Professor, Chotu Ram Arya College, Sonipat